3. धर्म की क्यों आवश्यकता है? आज तक की वैज्ञानिक उपलब्धियों और सभी धर्मों के सार–तत्व–ज्ञान के आधार पर कार्य–कारण; कार्य–परिणाम; नीति–व्यवहार; जीवन मूल्य–आचरण; सामाजिक मूल्य–व्यवस्था आदि किन कसौटियों के आधार पर निर्धारित किया जाये कि किस मूल–परिणाम को पाने के लिये धर्म की उत्पत्ति हुई? और वह मूल परिणाम क्या है? और उस परिणाम को कैसे प्राप्त किया जा सकता है?

4. निष्कर्ष : सभी धर्मों का सर्वसम्मत एवं सर्वमान्य मूल–प्राप्तव्य एवं मूल–कारण है :

"कर्त्तव्य–उत्तरदायित्व निर्वाह" द्वारा प्रमाणिकता की स्थापना।"

बिना किसी अपवाद के सभी प्राचीन या अर्वाचीन धर्मों के प्रणेता या ईश्वर के सनातन, पुरातन या अद्यनातन दूत या संदेश–वाहक ब्रह्मा–विष्णु–महेश, राम, कृष्ण, बुद्ध, कबीर, महावीर, क्राइस्ट, मौहम्मद साहिब, गुरू गोविन्द साहिब आदि मानव समाज को उसके कर्तव्य–उत्तरदायित्व निर्वाह का बोध कराने या संदेश सुनाने के लिये ही उत्पन्न हुये या अवतार लिया।

सभी ईश्वरीय अवतारों या ईश्वर के संदेशवाहकों में स्वयं कर्तव्य–दायित्व निर्वाह की मिसालें कायम करके अपने आचरण–व्यवहार द्वारा ही अपनी प्रमाणिकता स्थापित की। अपने अवतार लेने का कारण भी सभी ने ईश्वर का मानव समाज की खुशहाली और तरक्की के लिये जो संदेश सुनाया, वह है : कर्तव्य–उत्तरदायित्व निर्वाह।

5. अपने–अपने कर्तव्य–उत्तरदायित्वों का निर्वाह करके अपनी प्रमाणिकता स्थापित करो और अपने आचरण के द्वारा उसका प्रचार–प्रसार करो।

निर्विवाद रूप से दुनिया के सभी धर्म और उनके 700 करोड़ अनुयायी और उनके सर्वोच्च धर्म–गुरू, धर्माचार्य, हाजी, सूफी, सन्त–महात्मा, धर्मात्मा, परमात्मा, पादरी, ज्ञानी, विज्ञानी, शिक्षाशास्त्री और बुद्धिजीवी–विद्वान के साथ–साथ समाज संचालक, राजनीतिज्ञ, कूटनीतिज्ञ, उद्योगपति–धनपति, राजनेता, अभिनेता और यहां तक कि स्मगलर माफिया तक ने "कर्तव्य– उत्तरदायित्व निर्वाह द्वारा प्राप्त प्रमाणिकता" की वकालत की है और इसे सर्वसम्मत एवं सर्वमान्य "मूल प्रेय", "मूल–प्राप्तव्य" और "धर्म का मूल" कारण माना जाना है।

अनन्त काल से इस संदेश को देने और प्रचारित–प्रसारित करने के लिए ही ईश्वर के दूत या संदेश वाहक आये परन्तु हर बार मानव समाज, धर्म की विवेचना और चर्चा में उलझकर समझने और समझाने में असमर्थ रहे। अतः ईश्वर के दूतों और संदेश–वाहकों को बार–बार अवतार लेने पड़े।

इस बात को समझने की जरूरत है और धर्म जानने या उस पर चर्चा की बजाय उसे करने की जरूरत है।

अभी तक धर्म को जाना या माना तो गया है, परन्तु अब उसे अपने में उतारने की और करने की जरूरत है।